डॉ. बिभा कुमारी

हिंदी विभाग

विश्वेश्वर सिंह जनता महाविद्यालय राजनगर, मधुबनी

ललित नारायण मिथिला विश्वविद्यालय, दरभंगा

ताज कविता का सारांश

'ताज' कविता कवि सुमित्रा नंदन पंत ने 1935 में लिखी। यह कविता उंस दौर की है जब पंत मार्क्सवादी विचारधारा से प्रभावित थे और प्रगतिवादी धारा की रचनाएं कर रहे थे। मार्क्सवादी विचारधारा के अनुसार राष्ट्रीय पूँजी का प्रयोग जनता के कल्याण और सुख – समृद्धि के लिए होना चाहिए, सबको एक समान सुविधा और अवसर मिलना चाहिए। राजसी वैभव और विलास के लिए राष्ट्रीय पूँजी का उपयोग करना जनता के प्रति अन्याय है। पंत जी एक समाजवादी की दृष्टि से ताजमहल को देखते हैं तो उन्हें ताज का सौंदर्य प्रभावित नहीं करता है बल्कि उन्हें ताजमहल सामंतवादी युग के प्रतीक के रूप में दिखाई पड़ता है, जिसके निर्माण में कोटि – कोटि जनता के श्रम और धन का अपव्यय है। इस सामंतवादी व्यवस्था में रानी की स्मृति में बनाया गया महल भले प्रेम का अप्रतिम प्रतीक हो परंतु साम्यवादी दृष्टि से देखने पर भूखी – प्यासी बीमार जनता के साथ यह अन्याय है, उनके अधिकारों का हनन है। राजा अपने ऐश्वर्य में इस तरह मगन है कि उसे जनता का दुख दिखाई ही नहीं देता है। ऐसी सामाजिक विषमता को देखकर कवि की अति संवेदनशील आत्मा चीत्कार कर उठी, उसी चीत्कार की प्रतिक्रिया के रूप में कवि ने 'ताज' कविता की रचना की। इसी प्रकार के भावों की अभिव्यक्ति उर्दू के प्रसिद्ध कवि साहिर लुधियानवी ने भी की है –

"मेरे महबूब कहीं और मिला कर मुझसे।

एक शहंशाह ने दौलत का सहारा लेकर।

हम गरीबों की मुहब्बत का उड़ाया है मज़ाक़।।"

मृत साम्राज्ञी के स्मारक के रूप में ताजमहल का निर्माण करना कवि को निरर्थक प्रतीत होता है। एक ओर सामान्य जन – जीवन दुखों की चक्की में पिस रहा है, भूख रूपी आग की भट्ठी में जल रहा है, जी – तोड़ परिश्रम करने के बावजूद वह अपनी न्यूनतम दैनिक आवश्यकताओं की भी पूर्ति नहीं कर पा रहा है। ऐसे में संगमरमर से ऐसा महल बनाया जाना क्या उचित है? जनता दाने – दाने को मुहताज है, अन्न और वस्त्र के अभाव में कराह रहे हैं उन्हें देखने वाला कोई नहीं है। सामंती व्यवस्था की यही सबसे बड़ी दुर्गति और असंगति है कि जीवित लोगों को तो भोजन और वस्त्र भी नहीं मिल रहा है और मृत व्यक्ति की स्मृति में करोड़ों रुपये खर्च किये जा रहे हैं। कवि आहत है वह कविता में अनेक स्थानों पर अपना दुख प्रकट करता है। कवि को लगता है कि अपनों की याद तो स्वाभाविक है पर इतना एकरेखीय हो जाना कि मृत्यु की स्मृति में राजकोष ही लुटा देना क्या उचित है?

आखिर मृत व्यक्ति की स्मृति में जीवित लोगों को भुला देना कैसे उचित माना जा सकता है? सच्चे प्रेम को न किसी प्रमाण की आवश्यकता होती है और न ही किसी स्मारक की। जीवित लोगों की इतनी उपेक्षा तो बिल्कुल भी उचित नहीं है, एक राजा का यह कर्तव्य है कि वह प्रजा की आवश्यकता और सुविधा का ध्यान रखे। इस स्मारक के निर्माण के लिए जनता के श्रम का भी शोषण किया गया। उनके श्रम के बदले उचित पारिश्रमिक भी नहीं दिया गया। यह ताजमहल पुरानी सामंतवादी व्यवस्था का प्रतीक है। यह देखने में सुंदर और मनोहर है, इसकी सुंदरता के मोह में पड़कर जनता इसे आदर और विस्मय से देखती है। परंतु यह सत्य है कि मृत व्यक्ति की स्मृति में जीवित लोगों को पूर्णतः विस्मृत कर देना अन्याय है।